Volume-8, No. 2 Aug.-2021, pp. Hin.49-53

वर्तमान शारीरिक शिक्षा में योग शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व

श्री अनुज कुमार,
एम0 फिल0 (शारीरिक शिक्षा)
रविन्द्र नाथ टैगोर यूनिवर्सिटी रायसेन भोपाल, मध्य–प्रदेश भारत।
डॉ0 मनोज कुमार पाठक,
एच0 ओ0 डी0 शारीरिक शिक्षा विभाग,
रविन्द्र नाथ टैगोर यूनिवर्सिटी रायसेन भोपाल, मध्य–प्रदेश भारत।

प्रस्तावना
भारतीय संस्कृति मानव संस्कृति के रूप में विकसित एवं परिवर्धित हुई मानी जाती है, जिसका अपना एक इतिहास है। इसी प्रकार भारतीय शारीरिक शिक्षा भी विभिन्न रूपों में विकसित और पल्लवति होती रही है। इन दोनों का मूल मंत्र मानव सेवा ही रहा है। भारतीय संस्कृति में सभी युगों अच्छे एवं बुरे समय में शारीरिक शिक्षा को प्राथमिकता दी गयी है और शारीरिक शिक्षा के मूल्य को स्वाभाविक रूप से समझा और सराहा गया है। विद्वानों को सदैव आदरपूर्ण या उच्च स्थान पर सुशोभित किया गया है। संस्कृति शब्द दो शब्दों सम–कृति से मिलकर बना है। सम् का अर्थ है– उत्तम। कृति–चेष्टा के रूप में जानी जाती है। मानव ने जीवन को अधिक सरस, सौन्दर्यपूर्ण, सुसंस्कृत बनाने हेतु साहित्य कला, संगीत, अपनी विवेक शक्ति द्वारा मनस् व आत्मा को तृप्त करने हेतु कर्म व वैचारिक क्षेत्र में जो सृजन किया जाये, वही संस्कृति है। वह धर्म दर्शन, कला एवं विज्ञान के रूप में प्रस्फुटित होती है। संस्कृति मानव के व्यापक मानसिक क्षितिज (मानसिक विकास) की परिचायक होती है। एफ0जे0 ब्राउन, "संस्कृति मानव के सम्पूर्ण व्यवहार का एक ढांचा है जो अंशतः भौतिक पर्यावरण से प्रभावित होता है।

मुख्य शब्द– योग, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि।

यह पर्यावरण प्राकृतिक एवं मानव निर्मित दोनों प्रकार का हो सकता है। किन्तु प्रमुख से यह ढांचा सुनिश्चित विचारधाराओं, प्रवृत्तियों, मूल्यों तथा आदतों द्वारा प्रभावित होता है, जिसका विकास समूह द्वारा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये किया जा सकता है। संक्षेप में, हमारे समक्ष एक ही अर्थ गुंजित होता है कि मानवता की सतत् सेवा ही संस्कृति है। जहां तक शारीरिक शिक्षा का प्रश्न है, यह भी मानव सेवा का एक उपक्रम है। शारीरिक शिक्षा के कई रूप हैं, जैसे–कला, नृत्य, गायन, चित्रकला, संगीत, विज्ञान, धर्म, दर्शन, इतिहास। इन प्रत्येक रूपों में शारीरिक शिक्षा संस्कृति की वाहक मानी जाती है। भारतीय संस्कृति में एक सनातनता है, जो भारतीय संस्कृति का अमूल्य वैशिष्ट्य है। अपने प्रत्येक रूप में मनुष्य के संस्कारों का निर्माण मानव संस्कृति की विशेषता है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति ने भारतीय शारीरिक शिक्षा को संस्कार प्रधान बनाये रखा और ऐसी शारीरिक शिक्षा–दीक्षा की व्यवस्थाएं की गयीं जो संस्कृति की उद्भाव नहीं।

स्वामी विवेकानन्द
व्यक्ति के विकास को उसकी शारीरिक सत्ता के एक जीवन या कुछ माह या यहां तक कि घंटों में संक्षिप्त कर देने का साधन मानते हैं।

उपरोक्त परिभाषा के आलोक में स्पष्टतः व्यक्त किया जा सकता है कि योग शारीरिक शिक्षा वह क्रमबद्ध, सुनियोजित, चैतन्य, प्रक्रिया है, जो मनुष्य के विकास की प्रक्रिया को बहुत कम समय में सम्पन्न कर देती है।

महर्षि अरविन्द ने शरीर, मन, प्राण, बुद्धि और अध्यात्म सभी स्तरों पर व्यक्तित्व के संपूर्ण विकास को महत्व दिया है। योग को आत्मपूर्णता की दिशा में एक सुव्यवस्थित प्रयास स्वीकार किया। योग द्वारा अपूर्णताओं और सीमाओं को मिटाया जा सकता है और मनुष्य में अति मानव की स्थिति को विकसित किया जा सकता है।

संक्षेप
1. वैदिक परम्परा अनुसार योग द्वारा देवतुल्य गुणों की प्राप्ति होती है।

2. उपनिषद् योग का रोग, द्वेष से मुक्ति पाने का साधन मानते हैं।
3. महर्षि पतंजलि चित्त के ऊपर नियंत्रण पाने की प्रक्रिया को योग के रूप में परिभाषित करते हैं।
4. गीता–कर्मों में कौशल ही योग है।
5. योग विशिष्ट में मन को शान्त रखने की कुशल युक्ति को योग कहा गया है।
6. जैन व बौद्ध मतावलम्बी एकाग्र चिंतन को योग मानते हैं।
7. श्री अरविन्द के अनुसार–योग शारीरिक, मानसिक, भावात्मक, बौद्धिक और आध्यात्मिक स्तर पर संपूर्ण व्यक्तित्व का विकास है।

योगः एक स्थिति

मनुष्य चेतना की उच्चतर स्थितियों में पहुंचाने को सदैव प्रयासरत रहता है और इन स्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित करके कर्म करना सीखते हैं। योग हमारे मन की कारण अवस्था का निर्देश करता है। गीता कहती है–आशक्ति का परित्याग करके सफलता एवं असफलता में सम्भाव रखकर, योग में स्थित होकर कर्म करना चाहिए। समता की स्थिति ही योग है।

योगस्थः कुरूकर्माणि सह्त्यक्त्वा धनंजय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।। गीता–2.48

योग समाधि की स्थिति है। जटिलताओं में जकड़ी मनुष्य की बुद्धि समाधि में स्थिर व अचल हो जाती है तब योग की प्राप्ति होती है।

योग में मनुष्य की समस्त इन्द्रियां स्थित अवस्था में होती है। मन और इन्द्रियों पर पूर्ण नियंत्रण होता है। इस प्रकार भावनात्मक स्तर पर स्थिरता की अवस्था, मानसिक स्तर पर केन्द्रीयकरण और पृथक्करण का सन्तुलन, शारीरिक स्तर पर समस्थैतिकता की अवस्था योग है। योग सन्तुलित रीति से शरीर और मन में समन्वय स्थापित कर व्यक्तित्व को पूर्णता प्रदान करता है।

योग एक सृजन शक्ति

"योग योगैश्रर्य सामर्थ्य है" विश्व के अनन्त पदार्थ और अनन्त भाव परमेश्वर की योग शक्ति का सृजन है।

यह हमारी प्राचीन शारीरिक शिक्षा पद्धति का उत्स था। इसके मूल में मानव के संपूर्ण विकास का भाव अन्तर्निहित था। योग प्राचीन भारतीय शारीरिक शिक्षा का ऐसा अभिसंग था जो मनुष्य के पूर्ण विकास की दिशा में अग्रसर रहता था। अतः निःसंकोच कहा जा सकता है, कि प्राचीन भारत में शारीरिक शिक्षा एवं योग का एक ही लक्ष्य था–मानव का सर्वांग विकास। योग एक अलौकि साधना है जिसे सर्व विद्या भी कहते हैं। समस्या समाधान का अनुपम साधन है। अलौकिक विद्या होते हुए भी आज लौकिक समस्याओं के समाधान में इसका प्रयोग होने लगा है। शारीरिक शिक्षा की अनेक ऐसी समस्याएँ है जिनका समाधान योग द्वारा किया जा सकता है।

योग का एक महत्वपूर्ण भाग अष्टांग योग है। अष्टांग योग की शैक्षिक उपादेयता स्वःप्रमाणित है। यह शारीरिक शिक्षा प्रक्रिया को अधिक तार्किक, अर्थसंगत एवं आनन्ददायिनी क्रिया में परिवर्तित कर सकता है।

अष्टांग योग एवं शारीरिक शिक्षा में उसकी उपादेयता

योग 8 सोपानों में पूर्ण होता है यह आठ सोपान ही अष्टांग योग कहलाते हैं, जो निम्न प्रकार है

प्राणायाम

तस्मिन्सति श्वास प्रश्वास योर्गतिविच्छेदः प्राणायामः ।।2/49।। पा0यो0 सूत्र।

आसनों के पश्चात् श्वास प्रश्वास की गति का रूकना प्राणायाम कहलाता है।

प्राण का अर्थ है–श्वास और आयाम का अर्थ है–नियंत्रण पूर्वक श्वास को लंबा करना अथवा रोकना। जब श्वास पूर्ण नियंत्रण के साथ थमती है तो उसे प्राणायाम कहते हैं। प्राणायाम में आयाम, जिसे श्वास की लम्बाई कहते हैं, बढ़ती है परन्तु श्वास की प्रति मिनट संख्या या गिनती में कमी आती है।

प्राणायाम के अभ्यास के समय कुछ इस प्रकार की क्रियायें होती है जिससे आत्मिक शक्ति मुक्त होती है। इस मुक्ति का उद्गम प्रकाशावरण के हटने अथवा मस्तिष्क की निरूद्वता से होता है, जिस प्रकार विद्युत बल्ब जाते हैं जो ऊर्जा मुक्त होती है उसी प्रकार प्राणायाम में मस्तिष्क की शक्तियाँ मुक्त हो अभिव्यक्त होती हैं। प्राणायाम मन को धारणा के लिये विकसित तथा तत्पर करता है।

प्राणायाम और शारीरिक शिक्षा

प्राणायाम योग साधना की एक ऐसी विधा है जिसके अनन्त आयाम हैं। कभी यह शरीर साधना का सम्यक् साधन बन जाता है, तो कभी मस्तिष्क को प्रशिक्षण देने लगता है तो कभी लगता है तो कभी मन को नियंत्रित करने वाला सारथी बन जाता है। अपने विविध रूपों में प्राणायाम रूपों में प्राणायाम आधुनिक शारीरिक शिक्षा का एक प्रभावशाली अंग बनने की क्षमता रखता हैं। शारीरिक शिक्षा की प्रक्रिया जो विभिन्न चरणों में पूर्ण होती है उनमें शरीर, मन, मस्तिष्क सबका समान योगदान होता है और प्राणायाम इन सबको प्रभावित कर शारीरिक शिक्षा प्राप्ति की प्रक्रिया को एक नया स्वरूप प्रदान कर सकता है।

प्रत्याहार

स्वविषयासंप्रयोगे चित्तस्यस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः। पा0यो0 सूत्र प्रत्याहार का अर्थ है इन्द्रियों को उनके विषयों से विमुख करना। इन्द्रियों को वशीभूत करना प्रत्याहार का परिणाम है। प्रत्याहार की साधना से इन्द्रियां मनोकूल कार्य करती है। मन इन्द्रियों का दास नहीं रहता है। इन्द्रियाँ मन का अनुकरण कर उसके साथ अन्तर्मुखी हो जाती है।

प्रत्याहार के अनेक प्रकार हैं, जैस–त्राटक, नादयोग, जप, संगीत, कीर्तन आदि। इन सबका उद्देश्य इन्द्रियानुभूति का शुद्धिकरण तथा इन्द्रियों से मन को भीतर की ओर उन्नमुख करना होता है। प्रत्याहार से एकाग्रता की प्राप्ति होती है।

प्रत्याहार एवं शारीरिक शिक्षा

ऐन्द्रिक सुख की प्राप्ति हेतु मनुष्य विविध प्रकार के अनर्थकारी कृत्यों में लिप्त रहता है। प्रायः उसे ही सभी प्रकार की बुराईयों का कारण भी माना जाता है। शारीरिक शिक्षा जगत् में व्याप्त बुराईयों के लिये यह भी एक महत्वपूर्ण कारण माना जा सकता है। मगर व्यक्ति इस बुराई पर विजय प्राप्त कर ले तो वह विषय–वासनाओं को नियंत्रित करते हुए एक उदात्त शारीरिक शिक्षा प्राप्त कर सकता है, जो नैतिक निर्माण एवं चरित्र निर्माण में उपयोग हो सकती है।

धारणा

धारणा का अर्थ है–मानसिक एकाग्रता। राजयोग की छठवीं सीढ़ी धारणा का तात्पर्य उन विश्वासों को धारण करने से है जिनके द्वारा मनोवांछित स्थितियों को प्राप्त किया जा सकता है। अच्छे, आवश्यक, सामयिक एवं उपयोगी गुणों को अपने अन्दर धारण करना, धारणा का व्यावहारिक अर्थ हो सकता है।

''देश बन्धश्चितस्य धारणा'' ।।11।।

पा0यो0 सूत्र उपरोक्त सूत्र के अनुसार मन को एक स्थान पर टिकाना धारणा है। धारणा के अन्तर्गत किसी एक वस्तु, क्षेत्र, बिन्दु पर मन को एकाग्र करने का प्रयास किया जाता है। एकाग्रता की इस स्थिति में सहज बोध की क्षमता प्रखर हो जाती है।

धारणा की एकाग्रता, मन के अन्दर उठने वाले चंचल विचारों को भंग भी होती है। व्यास भाष्य के अनुसार धारणा के अन्तर्गत नाभिचक्र, हृदय कमल, नासिका का अग्रभाग, जिह्वा का अग्रभग आदि पर चित्त को स्थिर किया जाता है।

ध्यान

साधारण शब्दों में राजयोग की सातवीं पीढ़ी 'ध्यान' का अर्थ है–नियत विषय में अधिकाधिक मनोयोग के साथ तन्मय हो जाना, निमग्न हो जाना। धारणा नियम लक्ष्य में रूचि उत्पन्न करने का साधन है और ध्यान द्वारा तन्मय होने का प्रयास किया जाता है। ध्यान की साधना इस लक्ष्य की पूर्ति करती है कि व्यक्ति जो कुछ चाहता है उसका दृश्य चित्र बनाकर, मानसिक चेतना के सम्मुख रख, ध्यान द्वारा तदाकार अवस्था प्राप्त होने लगे।

पातंजलि योग सूत्र के अनुसार–''चेतना की तैल धारावत् अवस्था ध्यान होती है।''

ध्यान के दो बिन्दु महत्वपूर्ण हैं–

1. ध्येय वस्त पर चेतना का निरन्तर प्रवाह एवं
2. यह चेतना रहनी चाहिए कि ध्यान की प्रक्रिया जारी है।

समाधि

ध्यान की पूर्णतया समाधि है। किसी वस्तु या बिन्दु पर चित्र निर्विकल्प रूप से एकाग्र हो स्थिर हो जाता है। तब यह अवस्था ही समाधि अवस्था कहलाती है। समाधि में स्वयं की चेतना के अभाव में सिर्फ ध्यान वस्तु उपस्थित होती है। धारणा में सिद्ध होने पर ध्यान की स्थिति आती है, जो स्वयं समाधि में परिणित हो जाती है। साधक जैसे–जैसे समाधि की गहनता में प्रवेश करता, ध्येय बिन्दु स्पष्ट होता चला जाता है। साधक को अपने अस्तित्व का ज्ञान नहीं रहता। अवस्था यह होती है कि उसे यह भी ज्ञान नहीं होता कि वह ध्यान एवं एकाग्रता का अभ्यास कर रहा है। इस अवस्था में मन की अर्न्तबाह्य वृत्तियाँ समाप्त हो जाती हैं। एकमात्र चेतना शेष रह जाती है। समाधि की सहज एवं सर्वग्राह्य परिभाषा निम्नलिखित हो सकती है–''मन सहित पांचों ज्ञानेन्द्रियां यम पर विज्ञाम करती हैं और बुद्धि के व्यापार समाप्त हो जाते हैं, तो इस अवस्था को ऋषि–मुनि सर्वोच्च अवस्था अथवा समाधि कहते हैं।

ध्यान, धारणा व समाधि तीनों अंतरंग योग की अवस्थायें हैं। इनके पूर्व के पांच सोपानों की सम्बन्ध बुद्धि, चरित्र, आदत, मन, इन्द्रिया, प्राण आदि अन्नमय प्राणमय, मनोमय कोशों से है। इसीलिये इन्हें बहिंरग येाग कहते हैं। धारणा, ध्यान, समाधि का सम्बन्ध अर्न्तजगत एवं उसके अनुशासन से होता है।

धारणा, ध्यान, समाधि का शैक्षिक महत्व

योग के उपरोक्त तीनों सन्दर्भ मानसिक एकाग्रता से जुड़े हुए है। शारीरिक शिक्षा प्राप्ति के लिये मानसिक एकाग्रता की अपरिहार्यता से हम सभी भिज्ञ है। एकाग्रता के दो रूप हो सकते हैं–

1. निषेधात्मक एकाग्रता एवं 2. विधेयात्म्क एकाग्रता।

ध्यान के तीनों सन्दर्भ विधेयात्मक शिखा प्राप्ति के सहायक तत्व बन सकते हैं और इसका प्रयोग आज की शारीरिक शिक्षा व्यवस्था में व्यापक रूप में हो सकता है।

शारीरिक शिक्षा के सम्बन्ध में एक प्रयास किया गया– ''इस आज्ञा पत्र में निम्न धाराओं को जोड़कर शारीरिक शिक्षा का उत्तरदायित्व पहली बार ऊपर लिया। हर साल कम से कम एक लाख रूपये की कुल राशि, साहित्य के पुनरूत्थान और सुधार तथा पढ़े लिखे भारतीयों को प्रोत्साहन देने तथा भारत में ब्रिटिश में रहने वालों को विज्ञान के विभिन्न विषयों की शारीरिक शिक्षा देने के लिए अलग की जायेगी और इन कार्यों पर खर्च की जायेगी।

हमारी वर्तमान स्कूली शारीरिक शिक्षा ऐसे व्यक्ति तैयार करती है जो सम्पत्ति का उपभोग करना तो पसन्द करते है, परन्तु उत्पादन करना पसन्द नहीं करते। रोजगार शारीरिक शिक्षा का सर्वोपरि लक्ष्य ही सर्वांगीण विकास नहीं। शारीरिक शिक्षा का एकमात्र मापदंड है कि स्कूलों, कॉलेजों व विश्वविद्यालयों द्वारा प्रदान की जाने वाली डिग्रियां नौकरी में कितनी सहायक है। भारत में शारीरिक शिक्षा एवं योग का अविनाभाव सम्बन्ध रहा है। इसकी साक्षी हमारी भारतीय शैक्षिक परम्पराएं रही हैं। यहां प्रायः योग को शारीरिक शिक्षा का एक सशक्त साधन माना जाता रहा है। हमारे शैक्षिक पुरोधा स्वामी विवेकानन्द महर्षि अरविन्द भारत के ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व के ऐसे आचार्य माने जाते हैं, जिन्होंने शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र में योग का अभिनव प्रयोग किया।

स्वामी विवेकानन्द के शारीरिक शिक्षा दर्शन के उनकी वेदान्त दार्शनिक विचारधारों ने आकार प्रदान किया। स्वामी जी का कथन है कि "आज भारत को भगवत गीता कि नहीं बल्कि फूटवॉल के मैदान कि आवश्यकता है।"

सृष्टि का उद्देश्य

लीला ही सृष्टि का प्रयोजन है। श्री अरविन्द के अनुसार सृष्टि की अभिव्यक्ति आनन्द से हुई है, जिस प्रकार बालक केवल क्रीड़ा के आनन्द के लिये मिट्टी के घरौंदे बनाता और बिगाड़ता है, उसी प्रकार परम् पुरुष आनन्द हेतु विश्व की रचना करता है।

विकास

विकास का सिद्धान्त, तत्व मीमांसा व शारीरिक शिक्षा दर्शन का आधारभूत सिद्धांत है। श्री अरविन्द के अनुसार– यह जगत उस परम का इस पार्थिव सत्ता में अवरोहण है और प्रकृति इस पार्थिव सत्त का उस परम की ओर आरोहण है। विकास का यह सिद्धान्त ही प्रकृति के प्रगतिशील रूप की समुचित व्याख्या करता है। आरोहण क्रम– सत्, चित्, शक्ति और आनन्द, अधिमानस, मानव, जीव, प्राण और जड़तत्व। अवरोह क्रम– जड़–तत्व, प्राण, मानस, अधिमानस, आनन्द, चित्, शक्ति और सत्। पृथ्वी विकास क्रम का भौतिक क्षेत्र है। भौतिक चेतना में मन, बुद्धि और प्राण, अधिमानस, सच्चदानन्द तत्व रूप में छिपे हुए हैं। विकास क्रम तीन दिशाओं में होता है– विस्तार, ऊँचाई और पूर्णता।

1947 के पश्चात् अंग्रेजी सरकार द्वारा छोड़ी गयी व्यवस्था में आमूल–चूल परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की गयी। संविधान की घोषणाओं के अनुरूप शारीरिक शिक्षा के स्वरूप को निर्धारित किया गया। निःशुल्क अनिवार्य शारीरिक शिक्षा, स्त्री शारीरिक शिक्षा पर विशेष बल दिया गया। विश्वविद्यालय शारीरिक शिक्षा की स्थिति पर विचार किया और लक्ष्मी बाई राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा संस्थान ग्वालियर मध्य प्रदेश कि स्थापना कि गई।

7 मई 1961 ई० में नेता जी सुभाष राष्ट्रीय क्रीडा संस्थान पटियाला पंजाब खोला गया।

उपसंहार

1. भारतीय वैदिक परम्परा में योग दैवीय गुणों की प्राप्ति का साधन है। उपनिषदों के अनुसार योग राग व द्वेष से मुक्ति प्रदान करता है। यह शोक विनाशक है। योग की सर्वाधिक स्वीकृत एवं सर्वमान्य परिभाषा है–''योग चित्त की चंचल वृत्तियों का निरोध करता है।'' जहाँ गीता को कर्मों में कुशलता मानती है वहीं बौद्ध व जैन परम्परा योग को एकाग्रता मानती है। महर्षि अरविन्द शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक व आध्यात्मिक सभी स्तरों पर व्यक्त्वि के सम्पूर्ण विकास को योग मानते हैं। यह मनुष्य में अति मानव स्थिति को विकसित करता है, योग एक सृजानात्मक शक्ति है। अनादि काल से मनुष्य सुख प्राप्ति की और प्रवृत्त रहा है। योग शारीरिक शिक्षा भी मनुष्य द्वारा इसी दिशा में की गयी एक खोज है। योग शारीरिक शिक्षा में आध्यात्मिकता की प्रधानता होने के साथ–साथ लौकिकता का भी समावेश होता है।
2. योग को मानव मात्र के शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक सामाजिक, विकास हेतु महत्वपूर्ण पाया गया।
3. योग को छात्रों की अध्ययन योजना में शामिल किया जाना आवश्यक पाया गया। योगाभ्यास को शारीरिक शिक्षा के अर्न्तगत दैनिक विद्यालयी कार्यों तथा राष्ट्रीय सेवा योजना, राष्ट्रीय कैडेट कोर स्काउट गाईड तथा अन्य सह–पाठ्यक्रमीय क्रियाओं के साथ शामिल किया जाना आवश्यक है।

सम्दर्भ ग्रन्थ सूचिः

1. रस्तोगी, के0जी0– भारतीय शारीरिक शिक्षा का विकास एवं समस्याएं, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, पृ0 1–2

2. नगेन्द्र, एच0आर–योग, योग का आधार और उसके प्रयोग, पृ0–110
3. सरस्वती सत्यानन्द–मुक्ति के चार सोपान, पृ0–11
4. सरस्वती सत्यानन्द–मुक्ति के चार सोपान, पृ0–11
5. डॉ0 करंवेलकर, पृ0वि0–पातंजलि योग सूत्र, कैवलय धाम, लोणावाला, महाराष्ट्र, पृ0–65
6. रस्तोगी, के०जी०– भारतीय शारीरिक शिक्षा का विकास एवं समस्याएं, मेरठ, पृ० 16–17
7. पुरी, दास, चौपड़ा– भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक इतिहास, मैकमिलन इंडिया लि०, पृ० 227